ISSN 2320-768X, Impact Factor : 1.113
Vol. IX, Issue I (April – 2021)

संगीत में वाद्यवृन्द : विकास एवं इतिहास

योगेश कुमार
शोधार्थी (पीएच०डी०)
यू०जी०सी० नेट, संगीत विभाग, महर्षि दयानन्द विष्वविघालय, रोहतक (हरियाणा)

शोध प्रपत्र सार

भारतीय संगीत में 'वाद्य' का साहित्यिक अर्थ 'वादनीय या बजाने योग्य यन्त्र विशेष से है, यह शब्द 'वद' धातु से उत्पन्न हुआ है वृन्द का अर्थ है 'समूह'। अतः सामूहिक रूप से किया गया वाद्यों का सामूहिक वादन या वृन्दीकरण वास्तव में 'वाद्यवृन्द कहलाता है। यह सामूहिक प्रयोग चाहे शास्त्रीय संगीत में हो या लोक संगीत में हो अथवा रंगमचीय नृत्य–नाटिका, नृत्य या नाटक के साथ पार्श्व संगीत या सह संगीत के रूप में हो, सामान्य रूप से वाद्यों के नियमित समय की विशिष्ट संरचना के अर्न्तगत किया गया प्रयोग वा्दयवृन्द या वृन्दवादन कहलाता है, जिसमें स्वर व लय के अनेकानेक तकनीकी प्रयोग इस प्रकार आकार ग्रहण करतें है कि वह अपने आप में एक सम्यक एवं सम्पूर्ण संगीतात्मक कलाकृति बनकर भावनात्मक अभिव्यक्त करती है परन्तु अन्य प्रकार से भी सामूहिक रूप से वाद्यों का ध्वन्यात्मक प्रयोग वाद्यवृन्द शब्द की सार्थकता को सिद्ध करता है और इसी सार्थकता की और संकेत करते हुए संगीत की ऐतिहासिक परम्परा में तूर्य, आतोद्य, कुतुप आदि शब्दों का उल्लेख दृष्टिगोचर होता है।

रामायण, महाभारत, अष्टाध्यायी आदि ग्रंथों में यदि वाद्यवृन्द को 'तुर्य' कहा गया तो नाट्यशास्त्र में सामूहिक वादन को कुतुप कहा गया। मुगलकाल में वाद्यवृन्द को 'नौबत' कहा गया और आगे चलकर वाद्यवृन्द या वृन्दवादन को एक स्वतंत्र रंगमंचीय प्रस्तुतीकरण के रूप में चिन्हित किया गया।

(सा) पाश्चात्य संगीत में वाद्यवृन्दः– वाद्यवृन्द को अंग्रेजी में'आर्केस्ट्रा' कहते है जो कि ग्रीक भाषा का शब्द है। ग्रीक साहित्य के उल्लेखों के आधार पर ज्ञात होता है कि ''प्राचीन ग्रीक नाट्य ग्रहों में रंगमंच और श्रोताओं के मध्य एक ऐसा रिक्त स्थान होता था, जिसमें 12 कलाकार सामूहिक रूप से वाद्यों का वादन करते थे और रंगमंच पर नृत्यों का आयोजन होता था'' इस प्रकार नृत्य और वाद्यवृन्द में ग्रीक के प्राचीन संगीत का समावेश होता था और इस प्रकार वाद्यों के सामूहिक वादन की परम्परा ग्रीक संगीत में भी उपलब्ध होती है। इसे पार्श्व संगीत या नेपथ्य संगीत के रूप में वाद्यवृन्द का प्रयोग भी कहा जा सकता है। ग्रीक में 'आर्केस्ट्रा' उसे कहा जाता था, जब अनेकानेक वाद्यों की संगत के साथ खुले प्रांगणन में नृत्य किया जाता था। सम्भवतः उसी से प्ररेणा लेकर आज विविध प्रकार के वाद्यों के सामूहिक वादन को आर्केस्ट्रा के नाम से जाना जाता है। इसी प्रकार स्पष्ट होता है कि अनेक वाद्यों या वाद्य समूह का एक साथ संयुक्त रूप से वादन करना अत्यंत प्राचीन है। पाश्चात्य संगीत में आर्केस्ट्रा का पूर्णतः विकास हुआ। वाद्य–वृन्द एक सुनिश्चित एवं संतुलित वादक समुदाय के रूप में 16वीं शताब्दी में उभरकर सामने

ISSN 2320-768X, Impact Factor : 1.113
Vol. IX, Issue I (April – 2021)

आया। 'सिम्फनी' नामक विशाल वाद्यवृन्द के विकास का श्रेय 'वीथोवेन ' को जाता है। हायडन, मोजार्ट तथा वीथोवेन ने सिम्फनी आर्केस्ट्रा को अंतराष्ट्रीय मंच पर स्थापना की। हायडन को सिम्फनी आर्केस्ट्रा का पिता कहा जाता है। हायडन के शिष्य वीथोवेन ने इसमें 500 कलाकारों के भाग लेने की गतिशीलता प्रदान की। वीथोवेन ने सिम्फनी आवाजों का प्रयोग भी किया जो आर्केस्ट्रा की नवीन विशेषता है। सिम्फनी कविता में ऐसा लगता है, जैसे काव्य की छन्दों युक्त रचना के नियम का संगीत वाद्यों द्वारा निर्वाह किया गया हो ''सिम्फनी रचना में पॉच भाग तन्तु वाद्यों के (प्रथम वायलिन, द्वितीय वायलिन, वायोला, चेलो और डबल बांस) 1 वंशिया, 2 ओबोए, 3 कलारियोनेट, 4 ट्रम्पेंट, 5 हार्न और घन वाद्य थे। उस समय वीथोवने के पास 40 से अधिक वादक थे। सन 1842 ई. में 72 वादक थे। इसमें सिम्फनी के अतिरिक्त सोनाटा भी एक है। सोनेटा– ''इस रचना में प्यानों, वायलिन या सेलों आदि का प्रयोग किया जाता है। इसमें तीन या चार भाग होते है''

कानसर्टो– इस रचना में कलाकार को एक भाग में एंकाकी वादन का अवसर मिलता है।

ओपेरा– इसमें संगीत को नाटक, कविता, अभिनय, नृत्य और रंगमंच के साथ सम्मिलित कर लिया जाता है।

ऑरैटारियों– वेशभूषा परिवर्तन किए बिना धार्मिक घटनाओं को नाट्य पद्धति से प्रस्तुत करने की क्रिया को ऑरेटारियों कहते हैं।

स्वीट– इस रचना के अन्तर्गत भक्तिगीत, नृत्य, संगीत एवं धार्मिक गीतों की रचना की जाती है।

(रे) प्राचीनकाल में वाद्यवृन्दः– प्राचीनकाल में वाद्यवृन्द अपने विकासशील रूप में पल्लिवत् हो रहा था। इसके साक्ष्य तत्कालीन सांगीतिक ग्रंथों में मिलते हैं। प्राचीनकाल से ही वाद्यों का समूह वादन एक स्थान पर एकत्रित होकर किया जाता था। कलाकार एक मंच पर एकत्रित होकर, एक लाईन या घेरे में बैठकर वाद्यवृन्द करते थे। जब हम नाटक और संगीत की ऐतिहासिकता संस्कृत नाटकों में पढ़ते है तो ज्ञात होता है कि समूह रूप में गाने बजाने की परम्परा हमारे यहॉ काफी प्राचीन है। जैसे मंदिरों में पूजा के समय विभिन्न वाद्यों का प्रयोग, सामाजिक धार्मिक रीति रिवाजों पर समूह गायन तथा वाद्य वादन की लम्बी परम्परा रही है। मंदिरों में ईश्वर आराधना के समय शंख, घड़ियाल, मुरज, मृदंग, ढोल, घण्टा, वीणा आदि बजाने की प्राचीन परम्परा रही है जो आद्यान्त चलती आ रही है।

भारत की प्राचीन मूर्तिकला में भी वाद्यवृन्द का वर्णन मिलता है। ईसा से डेढ सौ वर्ष पूर्व का सांची स्तूप है जिसमें वाद्य एक साथ बजाते हुए दिखलाये गये है। इसी प्रकार प्राचीनकाल का एक वाद्यवृन्द भरहुत में उपलब्ध है, जिसमें विपंची वीणा, मंजीरा, मृदंग कई महिलाएं बजाती हुई दिखलाई गई है। दूसरी शताब्दी का एक वाद्यवृन्द दल औरगांबाद में प्राप्त है, जिसमें हुडडुक, वंशी तथा मृदंग बजाते हुए दिखलाये गये है। पॉचवी शताब्दी में नृत्य के साथ वाद्यवृन्द में चित्रा वीणा, विपंची वीणा, तथा ताल वाद्य दिखलाये गये है। नृत्य तथा वाद्यवृन्द का एक और उदाहरण अजन्ता गुफा 26 में प्राप्त होता है, जिसमें हुडडुक, मंजीरा, मृदंग आदि वाद्य दिखलाये गये है।

ISSN 2320-768X, Impact Factor : 1.113
Vol. IX, Issue I (April – 2021)

(गा) महाकाव्यो एवं नाट्यशास्त्र में वाद्यवृन्दः– 'महाभारत' का भारतीय साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रहा है, संगीत के दिव्य कलाकारों के रूप में गन्धर्व, किन्नरों का उल्लेख महाभारत में हुआ। गन्धर्व, किन्नरों तथा किंपुरुषों के निवास स्थान पर गीत तथा तूर्यवाद्यों का नाद सदैव गुंजयमान रहता था। महाभारतकाल में सामगान के साथ भेरी, मृदंग, शंख, पुष्कर तथा पणव आदि वाद्यों का समवेत निनाद किया जाता था। युद्ध के अवसर पर घोर वादित्र निनाद किया जाता था।

रामायण महाकाव्य काल का एक प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय महाकाव्य हैं। विद्वानों का कथन है कि इस काल में संगीतज्ञों की प्रतिष्ठा वैदिक काल के ही भांति थी इस काल में संगीतकारों की स्थिति एवं विभिन्न परिस्थितियों के अनुसार विभिन्न वाद्यों का उल्लेख एवं विभिन्न उत्सवों में सामूहिक वादन बहुत ही महत्वपूर्ण था।

रामायणकाल में वाद्ययंत्रों के लिए 'तूर्य' सामान्य संज्ञा थी तथा उसके अन्तर्गत शंख, दुन्दुभि, सुघोषा तथा अनेक प्रकार के वेणु वाद्यों का अर्न्तभाव था। रामायण काल में कई वाद्यों का वर्णन मिलता है।

1. तत वाद्यों के अन्तर्गत – वीणा, विपंची, वल्लकी आदि।
2. अवनद्ध वाद्यों के अंतर्गत – मृदंग, पटह, मुण्डक, डिण्डिम, पणव, मुरज, चेलिका आदि है।
3. सुषिर वाद्यों के अंतर्गत – वेणू व शंख आदि प्रमुख है।
4. घन वाद्यों के अंतर्गत – करताल, मंजीर व पाणिवादक आदि प्रमुख वाद्य हैं। रामायण में इन सभी वाद्यों का उल्लेख समूह वादन के रूप में हुआ हैं।

सर्वप्रथम वाद्यवृन्द की व्याख्या का उल्लेख भरतकृत ''नाट्यशास्त्र'' में उपलब्ध होता है। जिसका रचना काल चौथी शताब्दी माना जाता है। जैसा कि नाम से ही विदित होता है– यह ग्रन्थ नाट्य को ही लेकर रचा गया। रचनाकार भरत ने इस ग्रन्थ में नाटक सम्बन्धी सभी आयामों की चर्चा की है लेकिन जहां तक संगीत का प्रश्न है, उन्ही अंगों–उपांगों की चर्चा की है, जिनका किसी न किसी रूप में नाटक से संबंध है। इस ग्रन्थ के छः अध्याय (28 से 33 तक) संगीत से संबंधित है, जिनमें संगीत के सभी महत्वपूर्ण पहलुओं पर विचार किया गया है।

भरत ने अपने नाट्यशास्त्र में तीन प्रकार के कुतुप का उल्लेख किया है। तत् कुतुप, अवनद्ध कुतुप एवं नाटय कुतुप।

(मा) मध्यकाल में वाद्यवृन्दः– मध्यकाल में सामूहिक वादन के रूप में वाद्यवृन्द की यह परम्परा बौद्ध और जैन काल में भी उपलबध हुई। गुप्तकाल में युद्ध के समय कुतुप का प्रयोग किया जाता था। वाद्यों के विशेष प्रचलन के प्रमाण हमें उस काल के सिक्कों में भी मिलते हैं। जिस पर वीणा या वीणा वादक राजा की मूर्ति अकिंत थी। इसके पश्चात मुख्य बागडोर मुसलमानों के हाथ में आ गई। इससे राजनैतिक व सामाजिक परिस्थितियों में परिवर्तन के साथ भारतीय संस्कृति मे भी परिवर्तन हुआ, जो संस्कृति फली–फूली वह मुस्लिम संस्कृति से प्रभावित थी। मुगलकाल में वाद्यों के सामूहिक वादन को 'नौबत' की संज्ञा दी गई, जिसके अन्तर्गत नक्कारा, ढोल, दमदमा, नफीरी, सींग तथा झॉझ इन सभी वाद्यों का वादन किया जाता था।

ISSN 2320-768X, Impact Factor : 1.113
Vol. IX, Issue I (April – 2021)

मध्यकाल का 'नौबत' वाद्यवृन्द, जिसमें उच्च हिन्दू और मुसलमान लोग जिनका अपना सेवा मण्डल बैंड व्यावसायिक संगीतज्ञों के साथ जुड़ा रहता था। वे रात्रि अथवा दिन में कुछ निश्चित अवधि में अपनी सेवाएँ अर्पित करते थे। उन्हें कभी–कभी मन्दिरों, संत स्थलों, धार्मिक गुरु अथवा स्वामियों के लिए भी नौबत बैड प्रस्तुत करने का विशेषाधिकार प्राप्त था वस्तुतः इन्ही बैंडों को नौबत कहा जाता था।

नौबत से तात्पर्य है उत्सव या मंगल सूचक वाद्य जो देव मन्दिरों, राजदरबारों या बड़े आदमियों के द्वारा बजाया जाता था। नौबत द्वार के पास बने हुए उस मंच को कहा जाता था जिस पर डूम, नंगाड़े बजाते थे। 'नौबत' वाद्यवृन्द एक उच्कोटि तथा एक प्रमुख बैंड के रूप में उभर कर सामने आया। इसी काल का एक छोटा सा वाद्यवृन्द **रोशन चौंकी** था। जो बादशाहों एवं बडे अमीरों के खाने के समय बजाया जाता था।

इस प्रकार भारतीय ऐतिहासिक परम्परा में वाद्यवृन्द अर्थात् वाद्यों का सामूहिक रूप ऐसा समूह है, जिसका वादन रंगमंचीय प्रस्तुति लोक परम्परा, सहसंगीत, पार्श्व संगीत या फिर स्वतंत्र वादन के रूप में भारतीय संगीत की सांस्कृतिक परम्परा को सशक्त बनाता रहा है।

(पा) संगीत रत्नाकर, राग दर्पण, तोहफतउल में वाद्यवृन्दः– भरतकृत नाट्यशास्त्र के पश्चात वाद्यवृन्द की स्वतन्त्र और स्पष्ट व्याख्या 13वीं शताब्दी के संगीत ग्रन्थ शारंगदेव कृत 'संगीत रत्नाकार' में प्राप्त होती है।

संगीत रत्नाकार में वाद्यवृन्द का लक्षण गायक–वादक–सघात (समुह) कहकर दिया गया है। वृन्द के तीन भेद बताये गये है। (1) उत्तम (2) मध्यम (3) अधम अथवा कनिष्क। सिंह भूपाल के अनुसार जब इन तीनों ही प्रकार के कुतुपों को सम्मिलित किया जाये तो उसे वृन्द कहते है।

16वीं शताब्दी औरंगजेब के काल में फकीरुल्ला कृत 'राग दर्पण' में भी वाद्यवृन्द की चर्चा की गई है, जो इस प्रकार है–'' जब गायक समूह और वादक समूह एक साथ प्रदर्शन करें तो उसे वृन्दवादन कहते है''

औरंगजेब काल में ही मिर्जा खान ने 'तोहफतउल' ग्रन्थ की रचना की। इस ग्रन्थ के लेखक और काल के बारे में मतभेद है। मिर्जा के अनुसार ''गायक और वादक सगीतज्ञों का एक साथ मिलान वाद्यवृन्द कहलाता है।''

(धा) आधुनिक काल में वाद्यवृन्दः– आधुनिक काल में वाद्यवृन्द की नींव उस्ताद अलाऊद्दीन खां साहब ने 1920 ई. के आस–पास डाली। 40 सदस्यों का यह बैंड (मैहर स्ट्रिंग बैंड) के नाम से जाना जाता था। इस वृन्दवादन की रचनाएं शास्त्रीय रागों पर आधारित थी। वर्तमान में यह वाद्यवृन्द मध्यप्रदेश शासन के अंतर्गत मैहर में स्थित है। वाद्यवृन्द के अन्तर्गत जलतरंग, सितार, सरोद, तबला, विचित्र वीणा, वीणा, डोलक ड्रम, बांसुरी, कण्ट्रा, सांरगी आदि वाद्य प्रयोग किए जाते थे।

पं० रविशंकर के समय में वृन्दवादन के नवीनतम एवं उन्नति हेतु अपने द्वारा किए गए प्रयास अविस्मरणीय एवं अकथनीय है। उसके बाद

ISSN 2320-768X, Impact Factor : 1.113
Vol. IX, Issue I (April – 2021)

आकाशवाणी देहली में वाद्यवृन्द की स्थापना की। वाद्यवृन्द की रचनाओं में आप ने सितार, वीणा, सरोद, सारंगी, विचित्र वीणा, बांसुरी, जलतरंग, तबला, ढोलक, विभिन्न प्रकार के वाद्यों का प्रयोग किया।

पं० लालमणि मिश्र जी ने भी इस क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य किए हैं। गीत संगीत, नृत्यनाटिका को अभिनीत कराने की उनमें अदभुत क्षमता थी। संगीत महाविद्यालय में कार्यरत होते हुए उन्होंने कई सुन्दर वाद्यवृन्दों की रचना की थी, जिसमें समय अनुसार प्रातः काल से मध्य रात्रि तक के रागों का समन्वय किया था। विभिन्न प्रकार के वाद्यों के प्रयोग द्वारा नवीन वृन्दीकरण तथा वाद्यवृन्द के निर्माण करने की क्षमता उनकी उत्कृष्ट कला की परिचायक थी।

(नि) वर्तमान समय में वाद्यवृन्दः– अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय वाद्यवृन्द में इस तरह के प्रयोग किए जाए, जिससे भारतीय वाद्यवृन्द का रूप तो सौन्दर्यपूर्ण हो और उसकी भारतीयता भी नष्ट न होने पाए। वाद्यवृन्द में भारतीय लोक धुनों अथवा लोक वाद्यों को भी प्रयोग में लाना चाहिए जिससे वाद्यवृन्द एक नए रूप में प्रतिबिम्बित हो। आज ऐसे कई प्रयोग हो भी रहे हैं जिससे वाद्यवृन्द का अविष्कार हो रहा है। इसी वाद्यवृन्द के साथ वाद्यों द्वारा नए–नए प्रयोग हो कि भारतीय वृन्दीकरण में नई दिशाओं का सुत्रपात होगा और विश्व को यह भारतीय संगीत को एक अभूतपूर्ण देन होगी।

जैसे शास्त्रीय संगीत में एक नए वाद्यवृन्द का विकास कौशिकी चक्रवर्ती शास्त्रीय गायिका जी ने गायन, वादन व नृत्य तीनों कलाओं को सम्मलित करके किया है और इसमें सभी महिलाएं गायन, वादन, नृत्य पर अपना–अपना कार्य कर रही हैं इसमें एक मुख्य गायिका और नृत्यकी व चार वादिका सम्मलित है जोकि एक वायलिन वादिका है और एक तबले पर और एक मृंदग पर एवं एक बांसुरी वादिकाएं है। इस वाद्यवृन्द का नाम **संखी** दिया गया है। फिल्मी संगीत की दुनिया हो या शास्त्रीय संगीत कि इसी प्रकार हेमन्त कुमार वाद्यवृन्द ने भी संगीत की दुनिया को आगे बड़ाने का कार्य किया है (कर रहा है) हेमन्त कुमार म्युजिकल गुरूप (वाद्यवृन्द) भी आज की फिल्मी दुनियॉ में अपना रंग जमाए हुए है। इसमें लगभग 40 के आस–पास वाद्क एक साथ समूह वाद्न करते है।

वर्तमान समय में वाद्यवृन्द संगीत में एक रोचक एवं महत्वपूर्ण अंग है। आज वाद्यवृन्द के क्षेत्र में नए–नए प्रयोग हो रहे है। वर्तमान वाद्यवृन्द में परंम्परागत वाद्यों के साथ–साथ तकनीकी वाद्यों का एवं इलैक्ट्रोनिक वाद्यों का उपयोग भी किया जाने लगा है। वाद्यवृन्द के प्रचार–प्रसार एवं सरक्षण में अनेकों–अनेक संस्थाए प्रयास कर रही है। इनमें भारत के विश्वविद्यालय, संगीत नाट्क अकादमी, भारतीय केंद्रीय सम्बन्ध परिषद, सांस्कृतिक केंद्र तथा सांस्कृतिक मत्रांलय शामिल है।

प्रस्तुत शोध प्रपत्र के सक्षम अवलोकन से यह स्पष्ट सिद्ध होता है कि विश्व के तमाम संगीत प्रकारों में परम्परांगत भारतीय संगीत अत्यन्त प्राचीन एवं व्यापक है। भारतीय संगीत का मूल स्वरूप धर्म, दर्शन, साहित्य, नैतिकता, जीवन मूल्य, आदर्श आदि का पाठ पढ़ाता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि विश्व में सबसे पहले संगीत के क्षेत्र में वाद्य की अवधारणा भारतीय संगीत में आई। यहॉ पर एक बात और ध्यान

ISSN 2320-768X, Impact Factor : 1.113
Vol. IX, Issue I (April – 2021)

देने योग्य है कि आज भारतीय शास्त्रीय वाद्यवृन्द के साथ–साथ प्रादेशिक एवं लोक वाद्य भी अपनी पहचान बनाने में लगे हुए है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

5. आचार्य भरत, नाट्यशास्त्र, बाबू लाल शुक्ल शास्त्री, चौखंभा, संस्कृति संस्थान, वाराणसी प्र सं–1972
6. आचार्य भरत, नाट्यशास्त्र, श्री राम कृष्ण कवि, ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट, बडौदा प्र सं –1964
7. महर्षि वेदव्यास, महाभारत संक्षिप्त रूप, (संपादक, श्रीपाद दामोदर सातवलेकर) प्रकाशक, पूजा प्रकाशन, कुतुप पुल सदर बाजार, दिल्ली,
8. उमेश जोशी, भारतीय संगीत का इतिहासः मानसरोवर प्रकाशन महल, फिरोजाबाद, उत्तर प्रदेश, प्र सं–1969
9. कविता चक्रवर्ती, भारतीय संगीत में वाद्यवृन्दः राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर राजस्थान, प्रथम संस्करण–1960
10. लालमणि मिश्र, भारतीय संगीत वाद्य, भारतीय ज्ञान पीठ नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, जुलाई–1993
11. शरतचन्द्र श्रीधर परांजपे, भारतीय संगीत का इतिहासः चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी प्र सं–1968
12. ठाकुर जयदेव सिंह, भारतीय संगीत का इतिहासः सम्पादक प्रेमलता शर्मा, विश्वविद्यालय प्रकाशन चौंक, वाराणसी, प्र सं–1994
13. अबुल फज़ल, आईने अकबरी, हरिवंश राय शर्मा व फिदा हुसैन खां द्वारा मूल फारसी अनुवादित, महामना प्रकाशन मंदिर, इलाहाबाद, प्र सं–1966
14. (श्रीमती) योगमाया शुक्ल, तबले का उद्गम, विकास और वादन शैलियॉ, हिन्दी माध्यम का कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, प्रथम संस्करण,1987
15. शुचिस्मिता, आकाशवाणी एवं हिन्दुस्तानी संगीत, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, अंसारी रोड, दरियांगज, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2006
16. भगवतशरण शर्मा, ताल प्रकाश, संगीत कार्यालय हाथरस, उत्तर प्रदेश, पंचम संस्करण,1977
17. ओंकारनाथ ठाकुर, प्रणव–भारती, पं. ओंकारनाथ ठाकुर एस्टेट मुबई, प्रथम संस्करण,1946
18. अंजना भार्गव, भारतीय संगीत शास्त्रों में वाद्यों का चिंतन, कनिष्क पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स, अंसारी रोड़ दरियांगज, नई दिल्ली,प्र सं– 2002
19. सीताराम चतुर्वेदी, भारतीय तथा पाश्चात्य रंगमंच, प्रकाश हिन्दी समिति, सुचना विभाग लखनऊ, प्रथम संस्करण, 1964
20. मुहम्मदकरम इमाम, मदानुलमूसीकी, संगीत कार्यालय हाथरस, उत्तर प्रदेश, 1925